(स्व.) कान्हूचरण मोहांती

Late Shri Kanhu Charan Mohanty

ओड़िया भाषा के यश:काय रचनाकार (स्व.) कान्हूचरण मोहांती को उनके निधन के उपरांत अपना सर्वोच्च सम्मान - महत्तर सदस्यता - प्रदान करते हुए साहित्य अकादेमी स्वयं गौरवान्वित है।

श्री मोहांती का जन्म 11 अगस्त 1906 को ओड़िशा में सोनपुर में हुआ था जहाँ उनके पिता स्थानीय राजा के अधीन कार्य करते थे। उनकी प्रारम्भिक शिक्षा कटक में हुई थी। स्कूल पहुँचने के लिए उन्हें रोज़ सात मील पैदल चलना पड़ता था। स्कूली शिक्षा पूरी होने के पश्चात उन्होंने इंजीनियरिंग में प्रवेश लिया, किन्तु आर्थिक कठिनाइयों के कारण कालेज छोड़ना पड़ा। बाद में उन्होंने रॉबेन शा कालेज में प्रवेश लिया और 1929 में स्नातक हुए। 1931 में एक लिपिक के रूप में शासकीय सेवा में आए तथा 1964 में वरिष्ठ प्रशासनिक अधिकारी के पद से सेवा-निवृत्त हुए। सेवानिवृत्ति के पश्चात तीन वर्षों तक उन्होंने ओड़िशा साहित्य अकादेमी के सचिव के रूप में काम किया।

श्री मोहांती जब स्कूल में एक किशोर छात्र ही थे, तभी से उनकी सर्जनात्मक प्रतिभा प्रकट होने लगी थी। 1923-24 के दौरान छात्रावस्था में ही उन्होंने अपना पहला उपन्यास *उत्सबे व्यसने* लिख लिया था। उनकी यह अप्रकाशित पाण्डुलिपि बाद में प्राप्त न हो सकी, लेकिन इस प्रयास ने उनकी कारयित्री प्रतिभा को निरंतर आगे बढ़ने के लिए प्रेरित किया।

वह एक के बाद दूसरी पुस्तक लिखते गये और प्रत्येक पुस्तक ने ओड़िया पाठकों को ताज़ा और लाभप्रद अनुभव प्रदान किया। अब तक उनके छप्पन उपन्यास प्रकाशित हैं, जिनमें सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण हैं : *पलातक* (1930), *निष्पत्ति* (1932), *स्वप्न ना सत्य* (1933), *हा अन्ना* (1935), *अदेखा हाथ* (1943), *सास्ती* (1946), *अभिनेत्री* (1947), *पारी* (1954), *का* (1956), *बागा बाग्नली* (1964), *आंगना* (1971), *मायाब्रत* (1978), *नामती तारा चम्पा* (1980), और *जाखा* (1985)।

कान्हूचरण मोहांती के उपन्यास कई कारणों से उल्लेखनीय हैं। उन्होंने अपने पाठकों को न केवल विषयवस्तु और कथ्य की प्रभावशाली नवीनता उपलब्ध करायी, बल्कि फकीर मोहन के पश्चात सामाजिक और सांस्कृतिक परिस्थितियों के अपेक्षाकृत अधिक आलोचनात्मक मूल्यांकन के लिए मार्ग प्रशस्त किया। उन्होंने सामाजिक संस्थाओं के पारम्परिक चलन की वकालत करने और पीढ़ी-दर पीढ़ी चले आते अंधविश्वासों का समर्थन करने से इनकार किया जो तथ्यों की ग़ैर आलोचनात्मक परीक्षा पर आधारित थे। सामाजिक परिवेश का उनका मूल्यांकन, समस्याओं की गहरी जड़ों के विश्लेषण की उनकी तीव्र इच्छा द्वारा प्रेरित होता था, जो आधुनिक सभ्यता और मानवीय प्रगति को मूर्त रूप देने में कारणभूत हैं।

Late Shri Kanhu Charan Mohanty on whom the Sahitya Akademi is conferring its highest honour of Fellowship posthumously today, was one of the most eminent literary personalities in Oriya language. Born on 11 August 1906 at Sonepur in Orissa where his father was serving under the ruling chief, he had his first schooling at Cuttack and he had to cover seven miles daily on foot to attend school. After his school education was over, he enrolled himself as an engineering student, but financial constraints compelled him to leave college. Later he joined Ravenshaw College and graduated from there in 1929. In 1931 he joined Government service as a clerk and retired in 1964 as a Senior Administrative Officer. After retirement he worked as Secretary of the Orissa Sahitya Akademi for a period of three years.

Kanhu Charan's creative zeal was evident when he was still a school-going teenager. He wrote his first novel entitled *Utshabe Byasane* during 1923-24, when he was still a student. This unpublished manuscript could not be traced later, but this aesthetic venture propelled his creative self to move further on.

He went on writing one book after another and each gave the Oriya readers a fresh and rewarding reading experience. He has fifty-six published novels, the most important of which are: *Palataka* (1930), *Nispati* (1932), *Swapna Na Satya* (1933), *Ha Anna* (1935), *Adekha Hath* (1943), *Sasti* (1946), *Abhinetri* (1947), *Pari* (1954), *Ka* (1956), *Baga Bagnli* (1964), *Angana* (1971), *Mayabrata* (1978), *Namati Tara Champa* (1980) and *Jakha* (1985).

Kanhu Charan Mohanty's novels are remarkable for many reasons. He provided his readers not only with a striking freshness of theme and content, but also paved the way after Fakirmohan for a comparatively more critical evaluation of social and cultural conditions. He refrained from advocating traditional patterns of social institutions and subscribing to blind faith, based on a non-critical examination of facts, handed down from generation to generation. Instead, he endeavoured to posit and understand things in their proper perspective. His appreciation of the social environment was prompted by an ardent desire to analyse the deep roots of problems which are instrumental in shaping modern civilisation and human progress.

कान्हूचरण के पास एक सक्षम क़लम थी, मानव प्रकृति के चित्रण की पर्याप्त कुशलता थी। मानव-मस्तिष्क की कार्यप्रणाली की उनकी समझ उल्लेख्य थी। अपने कालेज के दिनों से ही वह साहित्य, इतिहास और सामाजिक विज्ञानों में गहरी रुचि रखते थे। ओड़ियाभाषी लोगों के लिए, जो आस-पास के विभिन्न राज्यों में बिखरे पड़े थे, एक अलग राज्य के निर्माण के लिए आन्दोलन तथा उत्तेजना के वे दिन थे। ओड़िशा के नेताओं ने सभी ओड़ियाभाषी क्षेत्रों के संघटन पर विशेष बल देते हुए एक सांस्कृतिक पुनर्जागरण लाने के लिए अपने को दृढ़प्रतिज्ञ किया। साथ-साथ, पाश्चात्य शिक्षा के प्रभाव ने साहित्यिक जन के मध्य आत्मनिरीक्षण की प्रवृत्ति पैदा करने में एक प्रभावशाली माध्यम के रूप में कार्य किया, जिससे उन्होंने ओड़िशा में पारम्परिक सांस्कृतिक पैटर्न की पुनर्परीक्षा का अधिक अन्तर्दृष्टि के साथ प्रयत्न किया।

उसी समय, विभिन्न राजनीतिक विचारधाराओं के प्रभाव भी अधिक तीक्ष्णता से लक्षित और स्पष्ट हुए। साहित्य जनता के अधिक निकट आया: शिक्षा-मानकों और नैतिक व्यवहारों, धार्मिक विश्वासों तथा आर्थिक समस्याओं को उसने नज़दीक से परखा। इस प्रकार साहित्य समकालीन उथल-पुथल भरे परिदृश्य को समूची जीवंतता और पूरी यथातथ्यता के साथ प्रतिबिम्बित करने लगा था।

कान्हूचरण मोहांती ने अपने भीतर मानो एक स्वच्छंदतावादी कलाकार और समाजसुधारक, राष्ट्रभक्त और स्वप्नद्रष्टा, समाजशास्त्र अध्येता और सांस्कृतिक 'मिशनरी' को समन्वित कर रखा था। *बलि राजा, सास्ती, हा अन्ना, झंझा, तुंदबाइदा* और *शर्वरी* उनकी कुछ उल्लेखनीय कृतियाँ हैं। *मिलनारा छंद* और *पारी* जैसी कृतियाँ मनोविश्लेषण की उनकी क्षमता और संस्कृति की उनकी प्रभावी मौलिक अवधारणा की सुस्पष्ट प्रमाण हैं।

कान्हूचरण को 1958 में *का* के लिए साहित्य अकादेमी पुरस्कार से सम्मानित किया गया। यह गृहस्थ जीवन की सीमाओं में बँधी समकालीन घटनाओं का अभिलेख है। उपन्यासकार ने विषयवस्तु के चयन और चरित्रांकन में केवल ओड़िशा पर ही अपना ध्यान केन्द्रित नहीं किया है; इस कहानी का सार्वभौमिक महत्त्व है। आधुनिक मस्तिष्क भौतिकवादी सभ्यता के प्रभाव द्वारा नष्ट हो रहा है। आविष्कार और दूसरे ऐसे उपकरण मानवीय प्रसन्नता के वाहक के रूप में आगे लाये जा रहे हैं, किन्तु समूचे विश्व में मनुष्य आत्मिक रूप से बौना होता जा रहा है। नि:स्वार्थ सेवा के ऊँचे आदर्श, अच्छाई और उदात्तता के कार्यों के प्रति समर्पण, अपने कर्तव्यों का उचित निष्पादन करने से प्राप्त स्वर्गोपम आनंद शताब्दियों से सम्मान पाते रहे हैं। आधुनिक विश्व में हम अपने को जितना सभ्य समझते हैं, उतना ही कम आध्यात्मिक होते जाने की प्रवृत्ति हम में होती है। उपन्यासकार ने अपने पात्रों के माध्यम से बड़ी ख़ूबसूरती से इन उदात्त विचारों का निरूपण किया है।

विचारधाराओं के इस सुखद सम्मिश्रण में मनोवैज्ञानिक विश्लेषण ने एक रम्य ताज़गी पैदा की है। आधुनिक सभ्यता के गौण उत्पादों, यथा कुण्ठा, नैतिक निष्ठा आदि का अभाव और जीवन के उच्चतर मूल्यों पर निम्नतर स्वार्थों की गिरफ़्त को विभिन्न स्थलों पर अच्छे उपकरणों की तरह पर्याप्त कुशलता से उपयोग में लाया गया है।

Kanhu Charan wielded a facile pen, possessed a considerable amount of skill in depicting human nature and displayed an appreciable understanding of the working of the human mind. From his college days he was deeply interested in the study of literature, history and social sciences. Those were the days of unrest and agitation for the formation of a separate state for the Oriya-speaking people who lay scattered in the various adjoining provinces. Leaders of Orissa set themselves resolutely to the task of bringing about a cultural renaissance, with particular emphasis on the linguistic integration of all the Oriya-speaking tracts. Simultaneously, the impact of western education worked as a powerful means of inculcating a tendency for introspection among literary men, who tried to re-examine the traditional cultural pattern in Orissa with greater insight.

At the same time, the influence of various political ideologies became sharply marked and visible. Literature came closer to the masses - to their education standards and ethical practice, religious beliefs and economic problems. Thus literature began to reflect the contemporary melee with unabated vigour and photographic accuracy.

Kanhu Charan Mohanty combined in himself a romantic artist and a social reformer, a nationalist and a visionary, a student of sociology and a cultural missionary. *Bali Raja, Sasti, Ha Anna, Jhanja, Tundabaida* and *Sarbari* are some of his outstanding creations. His *Milanara Chhanda* and his *Pari* bear evidence to his gift of psychoanalysis and his strikingly original concept of culture.

Kanhu Charan received the Sahitya Akademi Award in 1958 for *Ka*, which is a record of contemporary events confined to the bounds of domestic life. The novelist, in selecting his theme and painting his characters, has not focussed his attention merely on Orissa. The story has universal significance. The modern mind is corroded by the impact of materialistic civilisation. Autocentric motives dominate the minds of numerous individuals, scientific contrivances and other similar devices are brought forward as aids to human happiness. But spiritually, all over the world, the human being is getting dwarfed. The lofty ideals of selfless service, devotion to the cause of the good and the noble, the acquisition of divine pleasure from due discharge of duties, have been held with esteem for centuries. The more civilised we consider ourselves in the modern world, the less spiritual we tend to become. The novelist has, through his characters, beautifully elucidated these lofty ideals. Psychological analysis has added a charming freshness to the happy blending of ideologies. The by-products of modern civilisation such as frustration, lack of ethical integrity and subjection of higher values of life to baser considerations, have been used as good 'properties' with considerable skill at different places.

The personality of Kanhu Charan can be well studied even through a chronological account of his novels. From the

कान्हूचरण के व्यक्तित्व का अध्ययन उनके उपन्यासों के कालक्रम को दृष्टिगत रखते हुए भी सुचारु रूप से किया जा सकता है। एक देशभक्त और राष्ट्रवादी के भावात्मक उत्साह से आरंभ करके वह विश्व सभ्यता के राजपथ पर अग्रसर होने गए हैं। अर्धऐतिहासिक और अर्धपौराणिक रोमांस के धरातल से उतर कर वह आम आदमी के सामान्य धरातल पर आये। पिछले दो दशकों के दौर की उनकी कृतियों में न केवल उनके वैयक्तिक चेतना के विकास के तत्त्व मिलते हैं, बल्कि वैज्ञानिक परिवेश में मानव मस्तिष्क के विकास पर लादी गयी सीमाओं के भी।

वे अनेक पुरस्कारों से सम्मानित हुए थे जिनमें साहित्य अकादेमी पुरस्कार (1958), जीवन रंग पुरस्कार (1970) तथा नील शैल पुरस्कार (1992) शामिल हैं।

उपन्यासकार के रूप में उनकी महत्ता के लिए साहित्य अकादेमी ने उन्हें 4 फ़रवरी 1994 को महत्तर सदस्य चुना था। अकादेमी द्वारा उन्हें औपचारिक रूप से महत्तर सदस्यता प्रदान किये जाने से पहले ही दुर्भाग्यवश, 6 अप्रैल 1994 को उनका निधन हो गया। उनके देहावसान के बाद अत्यंत दु:ख और श्रद्धामय हर्ष के साथ अकादेमी (स्व.) कान्हूचरण मोहांती को अपना सर्वोच्च सम्मान, *महत्तर सदस्यता*, प्रदान करती है।

emotional fervour of a patriot and a nationalist, he had progressed along the highways of world civilization. He had come down to the plane of the common man from the lofty semihistorical and semi-legendary romances. His works produced during the last two decades contain elements not only of the development of his individual consciousness but also of the limits imposed on the progress of the human mind in a scientific environment.

He was honoured with a number of awards and prizes, including the Sahitya Akademi Award in 1958, Jeevan Rang Prize in 1970, and Neela Saila Award in 1992.

For his eminence as a novelist, the Sahitya Akademi elected Kanhu Charan Mohanty a Fellow on 4 February 1994. Unfortunately he passed away on 6 April 1994 before the Akademi could formally confer the honour. With deep regret and reverential joy the Akademi today confers its highest honour, the Fellowship, on the Late Kanhu Charan Mohanty posthumously.